39. "जीवित मरिये- भवजल तरिये"

"गुरु + बाणी+ कीर्तन" - हर कीर्तन गाइए - हर कीर्तन देखिए - हर कीर्तन सूघिंये - हर कीर्तन सुनिए और फिर इसी हरि के "निर्बाण कीर्तन" में मर जाइए सदा के लिए अर्थात जन्म - मरण से मुक्त यानी के सभी प्रकार के कष्टों दुखों अभावों से निजात पा लेना...! इसी विचित्रता को गुरु - सतगुरु इत्यादि भी कहा गया है - जिसका ध्यान करना विचार करना - गाना - सुनना - देखना - सुघंना है निरंतर आजन्म। इसी पर अपनी विशेष पूंजी मनुष्य जन्म की ज्यादा से ज्यादा लगभग पूरी तरह से खर्च कर देनी है - अपनी जरुरी मानव जन्म की अवश्य जिम्मेदारियों

विशेषओं को पूरी ईमानदारी और सत्यता से निभाते हुए । यही सच्चा पुरुषार्थ विशेष है किसी भी दूसरे के अधिकार विशेष में दखल दिए बिना - अपने को उभारना इन मन रूपी तत्वों विषयों के महिन जाल विशेष से...! इसका संबंध तो केवल मन रूपी चंचलता तक ही सीमित है –आत्मा विशेष का इस सारे आडम्बर से तो कुछ भी लेना देना ही नहीं है...! और निर्बाण गुरु – सतगुरु रूपी कीर्तन का संबंध केवल आत्मा विषय से ही है – अतः केवल इसी गाने – सुनने – देखने - सुघने और फिर इसके पूरी तरह से प्रत्यक्ष अनुभव हो जाने पर ही आपके दुर्लभ आवश्यक मनुष्य जन्म का अर्थ विशेष सार्थक अथवा पूरा होगा "प्रतख गुरु निस्तरे" का भाव केवल इसी से ही है ना की गद्दियों – पंथों – सतगुरुओं – कमेटियों - धर्मों विभिन्नो द्वारा चलाए जा रहे कर्म कांडो अथवा पूजा – अर्चना – स्नानो – तीर्थों – महलों – स्थानों – वस्तुओं - कपड़ों – औजारों - शस्त्रों इत्यादि में अपनी कीमती जन्म को पूरी तरह से डूबा देना...? लफ्जों का अर्थ केवल जानकारी तक ही सीमित होता है और कुछ भी तरह – तरह का प्रकार या पदार्थों इत्यादि इसमें घुसा नहीं होता है जो आपको तार देगा...! जानने के लिए भाषा एक आवश्यक माध्यम है और विद्वता भरे लफ्ज़ महान विशेष भी केवल जानकारी उपलब्ध करवाते हैं नाकि पदार्थ विशेष और वो भी ऐसा कि आप को मुक्ति विशेष दिला दे...!

ज़िन्दगी भर गुड़ - गुड़ चिल्लाते रहिये - गाते जपते - रहिये - इनमें ध्यान लगाते रहिये - सुनते रहिये - नाचते रहिये - दौड़ - दौड़कर इन लफजो के भंडारों की परिक्रमा करते रहिये - माथे रगड़ते रहिये तब भी यकीन जानिये कि इन सभी प्रक्रियाओं से अंत में आपको कुछ भी हासिल नहीं होने वाला बल्कि अगर कुछ होगा तो केवल शर्मिंदगी वो भी प्रभु के दरबार में - "मत शर्मिंदा थी वहें साईं के दरबार" तब रूह को चोटें खानी पड़ेगी - कुत्ता घसीटी भुगतनी पड़ेगी अर्थात बहुत - बहुत दुख भोगने पड़ेंगे अपने इन्हीं व्यर्थ के फोकट भरे महान - महान कर्मकांडों का पूरा - पूरा ब्याज सहित हिसाब देते - चुकाते वक्त...? अर्थात न तो कभी गुड़ प्रगट हुआ - न स्वाद ही आया और फिर ना ही संतुष्टी अथवा प्रसन्नता ही प्राप्त हुई - फिर आत्मा का पेट कैसे भर सकता है और वो भी सदा के लिये मुक्ति का सपना विशेष संजोये हुऐ...?

"कबीर सूता क्या करें - जागन की कर चोंप - ये दम हीरा-
लाल है गिन-गिन गुर को सौंप - कहता हूं कहे जात हूं कहूं
बजावत ढोल - स्वासा बिरथा जात है तीन लोक का मोल......!"

अर्थात ऐसी दम रुपी दुर्लभ आवश्यक पूंजी विशेष व्यर्थ के धंधे - करकटो पर ही खर्च कर दी सारी की सारी और अगर इसकी "एक दमड़ी रूपी दम" बाजार में खरीदने जाये तो अपनी अकथ मेहनत - प्रयासों से कमाई हुई तीनों मुल्कों विशेषों

की कुल सम्पत्ति चुकाने पर भी – प्राप्त होने वाली नहीं है – फिर सोच तेरे मरते यानी के सवास पूंजी के खत्म हो जाने पर ही तेरा दिवाला निकाल दें तुझे दिवालिया – भगोडा साबित करादे – क्या फायदा हुआ इसे दौड़ – दौड़कर इकट्ठा करने का...? "ऐसा कम मूले न कीचै – जिस अंत पछोताइये ।" फिर क्या करना चाहिये था...? व्यापारी सच व्यापार करो...? सच केवल गुरु यानी के शब्द अर्थात निर्बाण रूपी कीर्तन विशेष ही है – इसीलिए इसे सतगुरू कहा जाता है....! अरे-अरे-अरे अच्छा लगता है कहीं तू फंस तो नहीं गया – बीत गयो का ही ध्यान – साखियों का समागम करता हुआ....? अरे भाई बीत गये अर्थात भूतों ने जो कमाया – देखा – सुना इत्यादि अनुभव किया – हुआ लिख कर के बता दिया बस इससे आगे और कुछ भी तो नहीं है.....! अभी तक तो तू इन्हीं में उलझा हुआ है जन्म तो तेरा निरन्तर घटता ही जा रहा है – पूंजी विशेष मिटती ही जा रही है और तू है कि उछल-कूद करने नाचने – गाने – भृमण – शापिंग – नशे – और विभिन्न प्रकार की वासनाओं में ही उलझा हुआ "हैप्पीबर्थडे" जैसे जन्म – मरन – गद्दी – भंण्डारे इत्यादि वगैरह – वगैरह महान दिवस मनाते हुए वो भी बीत गये यानी के भूतकाल के महान भूत रूपी विभूतियों के ....! वाह रे अक्लमंद प्राणी...! ये सभी महानतम महानुभाव एक बार जाने के बाद न तो कभी भी किसी को मिलें हैं – ना ही मिल रहें हैं और आगे भी ना ही ये किसी को कभी भी

मिलने वाले हैं...! इसे अच्छी तरह से जान समझ लें...? जो कुछ भी इनके नामों को लेकर चल रहा है - प्रचारित हो रहा है वो केवल और केवल लोभी और स्वार्थी भेड़ की खाल में छुपे हुए भेड़ियों का ही चलाया हुआ एक भ्रम जाल है - जिसमें फंस कर तूं निरन्तर डूबता ही चला जा रहा है। उन्हें भी वो आत्माएं चला रही हैं जो अपनी वासनाओं को जीते जी पूरा ना कर सकीं - कुछ पर कुछ समय की कमाई इनके पास मौजूद है जिसका प्रयोग कार्य प्रभु - मसीहों इत्यादि के नाम पर प्रचारित - स्थापित करती हैं और फिर जब मनुष्य जन्म में आई आत्माएं इन्हें सजदा करती हैं - फरियादें करती हैं - मन्नतें मांगती हैं गिड़गिड़ाती है बार - बार - इनके स्थानों के चक्कर लगाती हैं यह आत्माएं आत्मविभोर हो जाती हैं और अपने को प्रभु जैसा अनुभव करती हैं और शेष सभी को सेवक या गुलाम जैसा...! उस आधार विशेष का इन सभी से कुछ भी लेना देना ही नहीं है...! जरा सोचो आप एक रूह हो जो इस शरीर में कैद हो और जिससे आपको मुक्ति मिल सकती है वो भी इसी शरीर में "संकलित मात्रा विशेष" में प्रत्यक्ष उपलब्ध विशेष हैं - फिर आपको उसकी प्रत्यक्षता बाहर शरीर के किसी भी प्रकार के महान यंत्र - मंत्र - स्नान - तीर्थ - पूजा - जप - प्रार्थना - कर्मकांड इत्यादि लफ्जों रूपी नामो - जलरूपी अमृतो वगैरा - वगैरा से कैसे प्राप्त हो सकती हैं...? लफ़्ज़ केवल जानकारी प्रस्तुत करते हैं तो जल - प्रसाद - भोजन

इत्यादि केवल शरीर की लाइफ लाइन है जो शरीर के कायम रहने हेतु अमृत का ही काम विशेष करते हैं...! आत्मा का इन सभी संसाधनों से कुछ भी लेना देना ही नहीं है। बल्कि उसे तो नौ दरवाजे जो इस शरीर की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु बनाए गए हैं इनमें अपनी दौड़ को धीमा करते हुए बंद करना है फिर तब जा करके तेरा असली काम रुपी सत्य पुरुषार्थ शुरू होगा और सोच अभी तो तू इसके शुरू होने से भी दूर - दूर तक कहीं दिखाई ही नहीं दे रहा फिर पूरा कब होगा तेरा यह आवश्यक कार्य...? क्योंकि जन्म तो निरंतर घिसता - घटता ही जा रहा है निरंतर बिना एक पल भी रुके...?

"लग्गा कित कुफकड़े- सभ मुकदी चली रैण । प्राणी तूं आयो लाहा लैण...!" "दसवै निज घर वासा पाए - ओथै अनहद सबद वजह दिन राती- गुरमती सबद सुणावणिआ...!"

लफ़्ज़ रूपी बाणी इसी भेद को बता रही हैं...! जानकारी दे रही है कि तू इस तरह से अपने शब्द रूपी गुरु कीमत विचार रूपी धारणा को धारण कर और फिर धीरे - धीरे सहज रूप से अपने अपराधों जन्म - जन्मों के को पूरी तरह से भुगतते हुए मुझे प्राप्त - अनुभव करता हुआ सदा के लिए मुझ में ही समा कर मुक्त विशेष हो जा - भ्रमों के भवसागर रुपी जालो से...! तभी तू इस खेल रूपी तमाशा का सच्चा और पूरा खिलाड़ी यानी के सूरमा

विशेष कहलाएगा...! "सूरा सो पहिचानीए जु लरै दीन के हेत...! पुरजा-पुरजा कट मरै - कबहू न छाडै खेत...!" इसके अलावा और कोई प्रकार - तरीका या साधन है ही नहीं...! इसीलिए तुझे मेरे सिवा और किसी भी साधन या सामग्री की आवश्यकता ही नहीं है और मैं केवल तुझे ही - केवल तेरे ही इस रूप यानी के शरीर में मिल सकता हूं...? इसीलिए मैं भी निरंतर सदा तुझे ही देखता रहता हूं - तुझे ही जपता हूं - केवल तेरा ही ध्यान करता हूं फिर तू है की किन्हीं औरों का ही जप - ध्यान - मन्नतों - कांडो इत्यादि में उलझा रहता है और दर-दर की ठोकरे खाने को ही अपना भाग्य दोष मानते हुए तड़पता रहता हैं...! एक मेरे सिवा और कोई कुछ भी तेरा नहीं हैं - सब एक भ्रम रूपी केवल धोखा मात्र ही हैं...? मेरा भी एक तेरे सिवा और कोई - कुछ भी नहीं हैं शेष सब कुछ एक मायाजाल के जैसा ही हैं...!

"गगन दमामा बाजिओ परिओ नीसानै घाउ -
खेत जु मांडिओ सूरमा अब जूझन को दाउ ।"

हे आत्मा तू मनुष्य जन्म में अवतरित हो चुकी है और तेरी मंजिल निश्चित हैं तुझे अब झूझना हैं और एक - एक करके सभी चक्रों विशेषो को भेद कर पार करना हैं ताकि तू मुझ तक पहुंच सके और तेरे इस मैदान - ऐ - जंग में साथ देने - रास्ता दिखाने हेतु मेरे सिवा तेरा और कोई भी नहीं हैं...! चुनाव केवल तुझे ही करना

हैं कि तुझे किस का साथ चाहिए बड़े - बड़े महान महानतम दल्लों रूपी विशेष विशेष साधनों का या मेरे द्वारा प्रस्तुत किए गए गुरु-सतगुरु रूपी "धुनशस्त्र" का जो तुझे निरंतर झूझता हुआ देखने को बेताब विशेष हैं...! फैसला ज़रा सोच विचार कर करीयेगा...? जिन्होंने यह लफ्जों रूपी बाणी में लिखकर के यह भेद बताया उन्ही में बहुतेरे तो कापी - कलम या शस्त्र आदि से तो दूर - दूर तक भी परिचित ही नहीं थे। समाज ने तो उन्हें ना तो पढ़ने ही दिया और ना ही कभी शस्त्र ही उठाने दिऐ...? फिर किस गुरु को उन्होंने अपनाया तथा अपनी दम रूपी कीमती पूंजी को उन्हें अर्पण करने हेतु कहा...? और फिर केवल इन्हीं रूहों ने ही सुरमा बन कर साबित किया कि हमारा गुरु तो केवल धुन - बाणी रूपी एक सतगुरु ही हैं और हम आत्मा रूपी इस सतगुरु की ही चेरी -अनुयाई - सेवक हैं जो इसकी सेवा करने हेतु ही इस जग में आई हैं...!

"मैं हूँ परम पुरख को दासा-देखन आयो - जगत तमासा।"

"सबद गुरू- सुरत धुन चेला। गोबिन्द गुण नाम धुन बाणी - स्मिृत शास्त्र वेदबखाणी...!"

एक ही सेवा सदा की मुक्ति दिलाता हैं "सेवा सुरत शब्द चित लाऐ...!"

पूरी सृष्टि की चमक - आकर्षण - समर्था - साधन - इच्छाए - ज़रूरतें - धर्म - नीतियां - पद्धियां - ताकत - ताकते इत्यादि - इत्यादि आत्माओं को "पथभ्रष्ट" करने हेतु ही प्रस्तुत किया गया हैं...! इस सारे खेल को समझने और ठीक फैसला करने हेतु ही आत्मा को बुद्धि रूपी विशेष शस्त्र प्रदान किया गया है तथा मन रूपी वज़ीर कार्यकारी अनुसंधान पूरा करने हेतु ताकि मंजिल तक समय सीमा में पहुंचा जा सके...! आत्मा ने अपनी बेवकूफी से स्वयं को इसका गुलाम बना लिया है क्योंकि मन लज्जत का आशिक बन चुका हैं और स्वयं को इंद्रियों का गुलाम बना उनके पीछे ही दौड़ता - फिरता रहता है...! आत्मा मन के बताए शॉर्टकट को ही अपनाती हैं और मन की लज्जत में हिस्सा बांटती हुई स्वाद लगाती हुई अमली विशेष बन - मन की ही गुलामी विशेष करते - करते अपनी स्वयं की समर्था ही भूल चुकी है...! पर्चा केवल आत्मा के नाम ही फटता है क्योंकि मन का तो कोई कमाई और खर्च का कार्ड ही नहीं हैं...? लेकिन पूरी रिकॉर्डिंग आद से अंत तक की इसके पास उपलब्ध विशेष रहती हैं...! जब आत्मा अपने वज़ूद को ही भूल चुकी हैं तो उसे अपने द्वारा किए गए कुछ भी गलत या ठीक का ज्ञान कहां से और कैसे रहेगा...? "मन तो लेखा मंगिये - जिन कीता व्यवहार (बापार) ।" जहां आत्मा मन पर पूरी तरह से कुर्बान होकर हर फैसला मन

को आधार बना कर करती हैं वही यही मन अदालत में खड़ा होकर बयान देता हैं कि रूह ने कब कहां - कहां क्या - क्या और क्यों किया...! तब आत्मा जागती हैं और फिर बहुत - बहुत तड़पती पछताती हैं पर अब तो सब कुछ किया जा चुके का परिणाम भुगतना ही शेष मात्रा बचा है जिसे तड़प - तड़प कर भोगने के सिवा और कुछ भी उपाय ही नहीं हैं...! अब जरा सोचो ऐसी निश्चित स्थिति में आपकी कोई भी खून में डूबी प्रार्थनाओं का कर्मकाण्डों प्रकारों का अरदसों का क्या कभी भी कुछ भी नतीजा आप को रंचमात्र भी राहत देने - मिलने का हो सकता हैं...? आज तक कभी भी किसी महानतम से भी महान महानतम को रंच मात्र भी छुटकारा बिना विद इंटरेस्ट भुगत - भुगतान किए बिना ना तो मिला है और ना ही आगे कभी मिलने वाला है क्योंकि यह सारा खेल कमाई और खर्च के "कोड (code)निश्चित" में बंधा हुआ है जिसका एक जरा विशेष भी हिलाने में घर समर्थ विशेष हैं निरंतर प्रत्येक काल स्थिति विशेष में भी...! पूरा खेल मन के इर्द - गिर्द ही घूमता रहता हैं अतः इसे अपने वस - अधीन किए बिना आत्मा कभी भी कुछ भी अपने लिए हित नहीं कमा सकती इसे निश्चित समझो...! अपने अंदर झांक कर देखो आज की असली परिस्थिति आपको क्या दे...? आपका हर फैसला यहां तक की छोटे से छोटा विचार भी मन पर ही आधारित हैं...? यह तो सारे का सारा सौदा ही भयानक

घाटे का है और आप है कि इसमें भी सुख - लाभ को ही तलाश ढूंढ रहे हैं...? यह सब एक मृग - मरीचिका नहीं हैं तो फिर और क्या हैं...? आज आपने सुना - पढ़ा - देखा होगा कि बहुत से परजीवी दूसरे समर्थ जीव को "होस्ट" बनकर उसके दिमाग में डेरा कब्जा जमा लेते हैं और फिर जिंदगी भर अपने स्वार्थों की पूर्ति हेतु उन्हें नचाते -कार्य विशेष - विशेष करवाते रहते हैं और खुद बड़े आराम से आनंद -मंगल मनाते हुऐ आराम से रहते हैं...! मरते दम तक कभी भी जीव को इस बात का भान तक भी नहीं होता कि वह तो केवल एक गुलाम की ही जिंदगी जी रहा है और मौज़ तो कोई और ही मना रहा है...! इसका परफेक्ट उदाहरण आप अपने अंदर झांक - विचार कर देख लो क्योंकि नतीजे तो कब के निकल ही चुके हैं - अब तो केवल तड़पना भुगतना ही बाकि बचा है...! आप इस सबसे बेखबर शीशे को ही मुग्ध विचार - संवार निहार सजने -सजाने में ही स्वयं को पूरी तरह से डुबोते जा रहे और चुके हैं...?

उपाय एक ही है वह भी अगर धड़कन कुछ बाकी हैं तो पहले अपनी बुद्धि को अपने वस में करो - इस मन रूपी विषाणु से मुक्त करवा कर फिर मन को दलीलो - ज्ञान - जानकारी द्वारा अधूरा और कमजोर साबित करो - फिर तब तक इसको गिल्टी साबित करो जबतक यह अपना पूरा का पूरा जहर उगल ना दे "समुद्र मंथन की तरह से" फिर इसे इन इंद्रियों से दूर सीमा बनाए

रखने के लिए लताड़ो – जब तक कि यह पूरी तरह से शांत विशेष ना हो जाए । प्रत्येक अनावश्यक चीज – विचार – इच्छा से इसे दूरी बनाए रखने हेतु प्रताड़ित करो पूरी तरह से सधा हुआ दिखाने के बाद भी कभी भी इस पर पूरी तरह से अंधा विश्वास मत करना। यह एक विषैले नाग की तरह से है जो जहरीले दांत निकालने के बाद भी कभी भी मौका मिलते ही डसने को हमेशा तैयार पर तैयार ही मिलेगा...! इतना सा यकीन तो आप इस लिखत पर कर ही सकते हो आपकी जेब से तो कुछ भी जाने वाला नहीं है फिर आजमाने में किस बात से डर रहे हो। भरोसा करो नतीजा अवश्य ही आपके हित में ही निकलेगा...!

"बंदे खोज दिल हर रोज- ना फिर परेसानी माह...!"

"टुक दम करारी जउ करह- हाजिर हजूर खुदाई ।"

"सावधान" मन की क्लास हर रोज निरंतर जिंदगी भर का होमवर्क हैं (जहां भी कभी किसी भी कारण से सावधानी घटी तो यकीन जानिए दुर्घटना अवश्य ही आवश्यक रूप से घटित होगी ही और उसके सुधार का कुछ भी उपाय इस सृष्टि में उपलब्ध कराया ही नहीं गया हैं तो फिर नतीजे से बचने की कल्पना भी कैसे की जा सकती हैं...?)। इस होमवर्क में कल या आलस के लिए कोई भी स्थान ही नहीं हैं...! "यह अनंत जन्मों – कल्पों का होमवर्क हैं" केवल एक पल के लिए मन को चंचलता

से मुक्त कर स्थिर करना ही ध्येय हैं फिर देखो इसका परिणाम भी बहुत ही विलक्षण हैं...? जो आपकी "मुक्ति विशेष" को आपके सम्मुख प्रत्यक्ष व्यावहारिक रूप से खड़ा कर अनुभव विशेष करा देगा और आप सभी विचारों से मुक्त - शांत - शीतल अनुभव करोगे इस अवस्था विशेष को किन्ही भी लफ्जों से ब्यान ही नहीं किया जा सकता क्योंकि "एक उसके आभाव" में सब कुछ अधूरा चंचल एक भ्रम मात्र ही तो हैं...! "बहुत जन्म बिछड़े थे माधो- एह जनम तुम्हारे लेखे ।" का आवश्यक संकल्प विशेष ही आपको सभी दुखों भाव से निजात पाने - करवाने में घर समर्थ विशेष हैं - यही मनुष्य जन्म की महानता हैं - केवल इंसान की जून में आई आत्मा का इंसानियत कमाते - खर्च करते हुए निरंतर आगे बढ़ते रहना ही जीवन तथा आवश्यक मुक्ति विशेष हैं । एक इंसान के रूप में यही इसका प्रमुख आवश्यक "धर्म विशेष" हैं शेष सब तो केवल एक डिस्ट्रेक्शन मात्र के सिवा और कुछ भी नहीं हैं...!

To Be Continued .....?